भारतीय आदिम सामाजिक ततैया

परोपकार के सरोकार

राघवेन्द्र गडगकर

पिछले अंक में आपने ततैया (आर. मार्जिनेटा) द्वारा अपने छत्ते में किए जाने वाले प्रमुख काम और इसके लिए दिए जाने वाले समय के बारे में विस्तार से पढ़ा था। इस बार ततैया के परस्पर सहयोग और परोपकार की भावना की बारीकियों में जाएँगे।

सवाल 2: बस्ती की ततैया आपस में सहयोग क्यों करती हैं?

मुझसे अकसर पूछा जाता है कि मैं सामाजिक कीटों, और उनमें भी खास तौर से *आर. मार्जिनेटा* का अध्ययन क्यों करता हूँ। मेरे अध्ययन के कम-से-कम दो कारण हैं। एक कारण का सम्बन्ध तो इस बात से है कि मैं वैकासिक (इवॉल्यूशनरी) जीव वैज्ञानिक हूँ। सारे वैकासिक जीव वैज्ञानिकों के समान मैं भी थियोडोसियस डोबज़ेंस्की के इस दावे से अभिभूत हूँ, "जैव-विकास की रोशनी के बगैर जीव विज्ञान में हर चीज़ बेमानी है।" और अन्य वैकासिक जीव वैज्ञानिकों के समान मेरे पास यह मानने के पर्याप्त कारण हैं कि डार्विन-वर्णित प्राकृतिक चयन ही पृथ्वी पर जीवन के विकास को आकार देने वाली प्रमुख शक्ति रही है। इसलिए मैं डार्विनवादी विकास के ताने-बाने में विरोधाभासी दिखने वाले तथ्यों और परिघटनाओं के प्रति सदा सतर्क रहता हूँ। और सामाजिक कीट ऐसे ही एक विरोधाभास के द्योतक हैं। इस विरोधाभास ने स्वयं डार्विन को भी परेशान किया था और उन्होंने

कीटों के कुछ पहलुओं के बारे में कहा था कि वे 'एक विशेष कठिनाई पेश करते हैं, जो शुरू में मुझे अलंघ्य, और दरअसल मेरे पूरे सिद्धान्त के लिए घातक लगी थी।'

सामाजिक कीट डार्विनवादी प्राकृतिक चयन के समक्ष कई मुश्किलें पेश करते हैं, मगर यहाँ हम इन कीटों में पाई जाने वाली सहयोग और परोपकार की सहजवृत्ति की बात कर रहे हैं। आम तौर पर सामाजिक कीट एक बस्ती के रूप में संगठित होते हैं, जिसकी मुखिया एक या एक से ज़्यादा उर्वर (fertile) रानियाँ होती हैं जबकि बस्ती की शेष (मादा) सदस्य अनुर्वर (sterile) गुलामों के समान काम करते हुए अपना जीवन बस्ती के कल्याण को, अर्थात् रानी के प्रजनन की सेवा में समर्पित कर देती हैं। सवाल यह है कि प्राकृतिक चयन ने कैसे मज़दूरों में ऐसे परोपकार के विकास को जन्म दिया और उसे जारी रखा है। जो परोपकारी मज़दूर रानी के लिए जीते-मरते हैं, क्या समय के साथ वे खत्म नहीं हो जाएँगे, और क्या उनका स्थान ऐसे स्वार्थी सदस्य नहीं ले लेंगे जो खुद अपना प्रजनन अधिकतम करके अपनी उत्तरजीविता को बढ़ाएँगे?

डब्ल्यू.डी. हैमिल्टन ने डार्विन के प्राकृतिक चयन के सिद्धान्त में एक सशक्त संशोधन सुझाया था जो इस समस्या को सुलझाने की सामर्थ्य रखता है। हैमिल्टन ने तर्क दिया कि सन्तान पैदा करना ही भावी पीढ़ियों में अपने जींस पहुँचाने का एकमात्र तरीका नहीं है। ऐसे जेनेटिक सम्बन्धियों, जिनके साथ वंशानुगति के चलते आपके जींस साझा हैं, के जीवन व प्रजनन में मदद करना भी उतना ही, या उससे भी ज़्यादा कारगर तरीका हो सकता है। इस प्रकार से, हैमिल्टन ने समावेशी (inclusive)फिटनेस की अवधारणा जोड़ी। इस समावेशी फिटनेस में भावी पीढ़ी में जींस का वह योगदान भी शामिल है जो प्रत्यक्ष रूप से सन्तानोत्पत्ति के माध्यम से दिया जाता है और वह योगदान भी शामिल है जो जेनेटिक सम्बन्धियों के प्रजनन में मदद करके परोक्ष रूप से दिया जाता है। (हैमिल्टन के मुताबिक) प्रत्येक सन्तान या सम्बन्धी का आकलन किया जाएगा कि उनके साथ किसी सदस्य के जींस में समानता कितनी है, फिर ऐसे सारे योगदानों को जोड़ा जा सकता है। इसके बाद हैमिल्टन ने परोपकार की उत्पत्ति के लिए कुछ नियम विकसित किए।

मूलतः, हैमिल्टन का नियम कहता है कि किसी भी आबादी में परोपकारी प्रवृत्ति फैलेगी यदि परोपकार के लाभ उसकी लागत से ज़्यादा हों। इसमें ध्यान रखने की बात यह है कि लाभों का मूल्यांकन इस आधार पर होगा कि परोपकार करने वाले सदस्य और परोपकार के हितग्राही के बीच कितने जींस साझा हुए हैं। उदाहरण के लिए, यदि एक जीव के पास यह विकल्प है कि वह उर्वर रहकर एक सन्तान पैदा

करे, या अनुर्वर रहकर दो बहनों की देखभाल करे, तो दूसरा विकल्प अधिक समावेशी फिटनेस प्रदान करेगा। ऐसा होने पर प्राकृतिक चयन द्वारा अनुर्वरता के विकास को बढ़ावा देने की सम्भावना बनती है। डार्विन द्वारा प्राकृतिक चयन का मूल सिद्धान्त प्रतिपादित किए जाने के बाद, यह शायद सबसे महत्वपूर्ण सूझबूझ (insight) कही जा सकती है।

अलबत्ता, हैमिल्टन एक कदम और आगे गए और पाया कि परोपकारी अनुर्वरता चींटियों, ततैयों, मधुमक्खियों में बहुत आम है और इन्हीं समूहों में इसे खास तौर से सम्भव बनाया जाता है। चींटियाँ, ततैया और मधुमक्खियाँ कीटों के 'हायमनोप्टेरा' वर्ग में आती हैं जिसमें नर अगुणित (हेप्लॉइड[1]) तथा मादाएँ द्विगुणित (डिप्लॉइड[2]) होती हैं। चूँकि नर अगुणित होते हैं, इसलिए उनमें मियोसिस तथा रिडक्शन डिवीज़न नहीं हो सकता। लिहाज़ा, ये माइटोसिस द्वारा शुक्राणु पैदा करते हैं जो सारे-के-सारे हूबहू एक समान (क्लोन) होते हैं। इसलिए दो बहनों के बीच जींस की साझेदारी 50 प्रतिशत (0.5) नहीं बल्कि 75 प्रतिशत (0.75) होती है। अर्थात्, मात्र एक बहन की देखभाल करने पर भी ज़्यादा समावेशी फिटनेस हासिल होती है, बनिस्बत खुद सन्तान पैदा करने के। उस समय माना जाता था कि समूचे द्विगुणित जीवजगत में परोपकारी अनुर्वरता का विकास एक बारी ही हुआ है जबकि अकेले हायमनोप्टेरा वर्ग में इसका विकास एक दर्ज़न बारी हुआ है; गौरतलब है कि कुल जन्तु प्रजातियों में से मात्र 2 प्रतिशत ही हायमनोप्टेरा में शामिल हैं। इसे अगुणित-द्विगुणित (haplodiploidy) परिकल्पना कहते हैं और यह परोपकार के विरोधाभास को एक झटके में सुलझा देती है।

हैमिल्टन की गणनाएँ इस मान्यता पर टिकी थीं कि सामाजिक कीट बस्ती में रानी एक ही नर से सम्भोग करती है। मगर यदि रानी एकाधिक नर से सम्भोग करती हो और पैदा हुई मादाएँ (बेटियाँ) सौतेली बहनें हों, तो पूरा तर्क नाकाम हो जाएगा। सौतेली बहनों के पिता अलग-अलग होंगे और इस तरह से उनके बीच साझा जींस मात्र 0.25 होंगे। अर्थात्, उन्हें स्वयं एक सन्तान पैदा करने से अधिक समावेशी फिटनेस तभी हासिल हो सकेगी जब वे कम-से-कम तीन बहनों की देखभाल करें। लिहाज़ा, यदि किसी बस्ती में मज़दूर सगी बहनें न होकर सौतेली बहनें हों (जो तब होगा जब उनके पिता या माता अलग-अलग हों), तो अगुणित-द्विगुणित की दलील काम नहीं करेगी।

तो अगुणित-द्विगुणित परिकल्पना को जाँचने का एक सरल तरीका उपलब्ध है। *आर. मार्जिनेटा* की बस्ती में दो अलग-अलग कारणों से मज़दूरों

[1]जीव या कोशिका जिसमें क्रोमोसोम का एक जोड़ा या एक सेट ही मौजूद हो।
[2]जीव या कोशिका जिसमें क्रोमोसोम के दो जोड़े या सेट मौजूद हों।

के बीच सम्बन्ध सैद्धान्तिक 0.75 से कम हो सकता है। पहला, हो सकता है कि रानी बेटियाँ पैदा करने के लिए एकाधिक नर से सम्भोग करके शुक्राणुओं का मिश्रण करती हो {इसे बहु-पतित्व (polyandry) कहते हैं}। दूसरा, यह भी हो सकता है कि समय-समय पर रानी बदली जाती हो, जिसके चलते एक ही समय पर मौजूद मज़दूर अलग-अलग रानी की सन्तानें हों{इसे क्रमिक बहु-पत्नीत्व (polygamy) कहते हैं}। हमने इन दोनों सम्भावनाओं की जाँच की। एकाधिक नर से सम्भोग की बात को पहचानने के लिए जैव-रासायनिक/आण्विक चिन्हों (मार्कर्स) का उपयोग करना होता है क्योंकि विभिन्न पिता की सन्तानों को अलग-अलग पहचानने के लिए कोई उपयोगी शारीरिक मार्कर्स नहीं हैं। तो थोड़ी अनिच्छा से मैं हाई-टेक मार्ग पर गया।

विडम्बना देखिए कि इस मामले में न तो जैव-रसायन शास्त्र या आण्विक जीव विज्ञान में मेरी शिक्षा कोई मदद कर पाई और न ही इन विषयों के मेरे मित्र किसी काम आ सके। पीछे देखते हुए, आज मुझे समझ में आता है कि इसका कारण यह है कि जैव-रसायन शास्त्र और आण्विक जीव वैज्ञानिक अपने सामने उपस्थित समस्या पर इतनी संकीर्णता से एकाग्र होते हैं कि वे एक बड़े कैनवास पर पेंटिंग करने की आदत और कल्पना-शीलता विकसित ही नहीं कर पाते। मेरे एक प्रतिष्ठित परामर्शदाता के दफ्तर में एक बड़ा-सा पोस्टर था, जिस पर लिखा था, 'सोचो मत, प्रयोग करो।' दूसरी ओर, वैकासिक जीव विज्ञानी तो कल्पना करने और जीवन-से-वृहद सवाल पूछने में विशेष गर्व महसूस करते हैं। यह बात चौंकाने वाली थी कि एक ओर तो मेरे वे सहकर्मी, जेल इलेक्ट्रोफोरेसिस जिनकी रोज़ी-रोटी थी, उन्होंने इसके (जैव-रासायनिक/आण्विक चिन्हों के विश्लेषण में जेल इलेक्ट्रोफोरेसिस के उपयोग के) बारे में सुना तक नहीं था, जबकि दूसरी ओर, माधव गाडगिल जैसे वैकासिक जीव विज्ञानी, जिनका जैव-रसायन में कोई अनुभव नहीं था, वे हबी और लेवोंटिन द्वारा 1966 में ड्रॉसोफिला की प्राकृतिक आबादी में जेनेटिक विविधता के प्रथम मात्रात्मक मापन के लिए जेल इलेक्ट्रोफोरेसिस के इस्तेमाल की नाटकीय उपलब्धि की बातें बढ़-चढ़कर करते थे। मैंने काफी उत्साह से हबी और लेवोंटिन के जुड़वाँ पर्चे पढ़े, और बाद में लेवोंटिन का अनूठा मोनोग्राफ पढ़ा। मगर यह समझ नहीं आया कि ज़रूरी प्रयोग शुरू कैसे करूँ। मेरे एक अन्य परामर्शदाता एच. शरत चन्द्र ने मुझे स्टार्च की एक बड़ी बोतल दे दी जो वे यू.एस. से इस उम्मीद में लाए थे कि अपने किचन में जेल इलेक्ट्रो-फोरेसिस जमाएँगे। मैंने इस स्टार्च और स्थानीय रूप से बनाए गए इलेक्ट्रोफोरेसिस उपकरण के साथ थोड़ा खिलवाड़ किया मगर बात ज़्यादा आगे नहीं बढ़ी।

अन्ततः मुझे अपनी एक मित्र व सहकर्मी, सूक्ष्मजीव विज्ञान व कोशिका विज्ञान विभाग की एम.एस. शैला की मदद से और एक पोस्ट-डॉक विद्यार्थी के. मुरलीधरन तथा एक सक्षम टेक्नीशियन प्रीती रॉय को नियुक्त करने के बाद सफलता मिली। हमने यथासम्भव सबसे सरल विधि का उपयोग किया और ततैया की माँ और बेटियों का जीनोटाइप प्राप्त किया (यह जीनोटाइप गुणसूत्र के कुछ अविशिष्ट यानी नॉन-स्पेसिफिक एस्टरेस खण्डों का था)। चूँकि सारे नर अगुणित थे, इसलिए माँ और बेटियों के जीनोटाइप से हम पिता के जीनोटाइप का काफी ठीक-ठाक निष्कर्ष निकाल सकते थे, या कम-से-कम इतना तो पता कर ही सकते थे कि प्रेक्षित बेटियाँ पैदा करने के लिए कितने पिताओं की ज़रूरत होगी। हमने पाया कि *आर. मार्जिनेटा* की रानियाँ 1-3 अलग-अलग नरों से सम्भोग करती हैं और उनकी बेटियों के बीच औसत सम्बन्ध सैद्धान्तिक 0.75 न होकर लगभग 0.50 है। अर्थात्, यह सामाजिक विकास में अगुणित-द्विगुणित स्थिति के लाभ, जिसकी बात हैमिल्टन ने की थी, को झुठला देता है।

क्रमिक बहुपत्नीत्व की जाँच के सन्दर्भ में मैं सरल प्रेक्षण विधि का उपयोग कर सका। इसमें के. चन्द्रशेखर, स्वर्णलता चन्द्रन और सीता भागवन समेत विद्यार्थियों की एक बड़ी टीम ने सहयोग किया था। हमें इतना ही करना होता था कि सारे अण्डों, इल्लियों, शंखियों और वयस्कों का व्यवस्थित रिकॉर्ड रखें और लगातार अण्डों की हर खेप की पहचान पर ध्यान दें। इसके लिए घोंसले का एक मानचित्र बनाना होता था और यह चिन्हित करना होता था कि विभिन्न प्रकोष्ठों में विभिन्न अवस्थाओं (इल्ली, शंखी वगैरह) की स्थिति क्या है। साथ ही सारे विमोचित (eclosing) होते वयस्कों को चिन्हित करना होता था और रोज़ाना इस बात पर ध्यान देना होता था कि रानी वही है या बदल दी गई है। इसके ज़रिए हमें सारे अण्डों, इल्लियों, शंखियों और वयस्कों के परस्पर आनुवंशिक सम्बन्धों की जानकारी मिल गई। इन आँकड़ों के आधार पर हमने रानी की वंशावली तैयार की; मुझे यह बताना अच्छा लगता है कि यह किसी अकशेरुकी जीव की प्रथम शाही वंशावली थी (देखें चित्र 4)।

हमें यह देखकर हैरत हुई कि रानी काफी जल्दी-जल्दी बदली जाती है। और उसका स्थान न सिर्फ उसकी बेटियाँ बल्कि उसकी बहनें, भानजियाँ, या कज़िंस भी ले सकती हैं। इससे भी ज़्यादा हैरत की बात यह थी कि रानी के बदलने का मज़दूरों पर ज़्यादा असर नहीं होता था; जो मज़दूर अपदस्थ रानी की सन्तानें हैं, वे नई रानी के लिए भी काम करती रहती थीं, जैसे कुछ हुआ ही न हो। हालाँकि, रानियों की आयु (औसतन 80 दिन) मज़दूरों

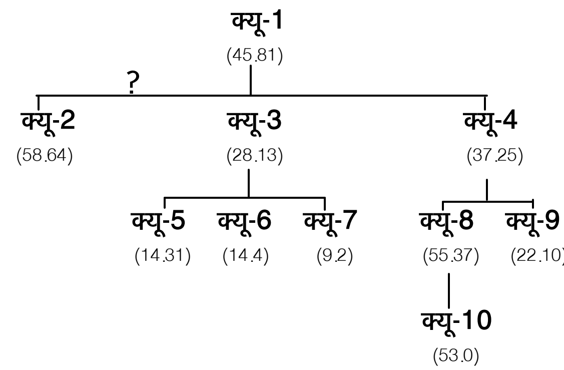

चित्र 4: वास्प आर.मर्जिनेटा रानी की वंशावली - इस वंशावली को देखकर साफतौर पर समझ आता है कि क्यू-2, क्यू-3 और क्यू-4, ये क्यू-1 की बेटियाँ हैं। इसी तरह क्यू-5, क्यू-6 और क्यू-7, ये क्यू-3 की बेटियाँ हैं। लेकिन क्यू-2 और क्यू-1 के रिश्ते के बारे में कुछ शंका होने की वजह से यहाँ सवालिया निशान लगा हुआ है। इस वंशावली में हरेक रानी के नाम के साथ दो अंक लिखे हुए हैं। इनमें से पहला अंक रानी के कार्य काल के दिनों को दर्शाता है, तो दूसरा अंक इस कार्यकाल में रानी द्वारा पैदा किए गए शिशुओं की संख्या को बताता है।

की औसत आयु (करीब 30 दिन) से अधिक होती है मगर उनकी आयु की रेंज एक समान है - कुछ रानियाँ मात्र एक सप्ताह जीवित रहती हैं जबकि कुछ मज़दूर कई महीनों तक जीवित रहते हैं। इसका मतलब है कि मज़दूरों और विभिन्न मातृवंश की सन्तान समूहों के बीच काफी ओवरलैप होता है जिसके चलते विभिन्न सन्तान समूह उनकी देखभाल करने वाले मज़दूरों से कई अलग-अलग रिश्तों में बँधे होते हैं - भाई, बहन, भतीजे-भतीजी, कज़िंस, कज़िंस की सन्तानें, माँ के कज़िंस, माँ के कज़िंस की सन्तानें, और यहाँ तक कि माँ की कज़िंस के नाती-नातिन।

मैं कबूल करता हूँ कि हम इस बात के लिए कदापि तैयार नहीं थे कि *आर. मार्जिनेटा* की बस्ती की पारिवारिक जेनेटिक संरचना इतनी पेचीदा होगी। मुझे यह बताने में बहुत मज़ा आता है कि *आर. मार्जिनेटा* किसी भी भारतीय संयुक्त परिवार को शर्मिन्दा कर देगी। बहु-पतीत्व और क्रमिक बहु-पत्नीत्व के मिले-जुले असर को ध्यान में रखते हुए हमने गणना की कि *आर. मार्जिनेटा* के मज़दूरों के बीच जेनेटिक सम्बन्ध अधिकतम 0.75 से लेकर न्यूनतम 0.0165 तक है। और यदि अध्ययन की पूरी अवधि के लिए इसका औसत निकालें तो चार बस्तियों में यह सम्बन्ध 0.44 से 0.22

की रेंज में था। इन परिणामों ने अगुणित-द्विगुणित परिकल्पना की तो हवा ही निकाल दी। यदि सिर्फ जेनेटिक सम्बन्धता पर ध्यान दें, तो मज़दूरों के लिए यह ज़्यादा लाभप्रद था कि वे अपनी जन्म-बस्ती को छोड़कर खुद अपनी सन्तानें पैदा करें, बनिस्बत कि वे उसी बस्ती में रहकर रानी के लिए काम करते रहें।

अलबत्ता, शायद पूरी बस्ती के अन्दर औसत जेनेटिक सम्बन्धता कम होने से कोई फर्क न पड़े क्योंकि हो सकता है कि मज़दूरों में सगों की पहचान की सुविकसित क्षमता हो और इसकी मदद से वे अपनी सगी बहनों (सम्बन्धता 0.75) को पहचानते हों और चुन-चुनकर परोपकार करते हों। अर्थात् भाई-भतीजावाद का बोलबाला हो, और इस तरह से उन्हें अगुणित-द्विगुणित की जिनेटिक असममिति का लाभ मिल जाए। इस सम्भावना की जाँच करने के लिए हमने *आर. मार्जिनेटा* में घोंसला-साथी व सगे की पहचान के अध्ययन की एक बड़ी अनुसंधान परियोजना शुरू की। लम्बी कहानी को छोटे में बताएँ, तो यह कहा जा सकता है कि हमें बस्ती के अन्दर सगों की पहचान का कोई प्रमाण नहीं मिला; लिहाज़ा, अगुणित-द्विगुणित परिकल्पना को बचाया न जा सका।

अगुणित-द्विगुणित परिकल्पना के अवसान ने एक बेचैन शून्य पैदा कर दिया। वैसे तो परोपकारी आचरण को बढ़ावा देने के कई अन्य कारक हो सकते हैं, मगर अगुणित-द्विगुणित जैसा कारक तलाशना मुश्किल था जो हायमनोप्टेरा का अनोखा गुणधर्म है और जिसकी मदद से अकेले इसी कीट वर्ग में वास्तविक सामाजिकता (eusociality) की एकाधिक बार उत्पत्ति की व्याख्या हो सकती है। इस शर्त को पूरी करने के नज़दीक जो कारक थे, वे हैं जनांकिक (demographic) कारक, जैसे लम्बी व विविधतापूर्ण आयु, अत्यन्त विविधता-पूर्ण उर्वरता, सन्तानों का पालकीय देखभाल पर लम्बे समय तक निर्भर रहना, और प्रजननक्षम होने में लगने वाला लम्बा व अलग-अलग समय। ये ऐसे कारक हैं जो परोक्ष फिटनेस पर निर्भरता से सम्बद्ध परोपकारी अनुर्वरता को एक आकर्षक विकल्प बनाते हैं। ज़्यादा महत्वपूर्ण बात यह है कि ये वे कारक हैं जो कुछ सदस्यों के लिए प्रत्यक्ष फिटनेस पर ध्यान देना तथा कुछ सदस्यों के लिए परोक्ष फिटनेस पर ध्यान देना लाभप्रद बनाते हैं; इसके चलते प्रजाति के अन्दर वह विविधता पैदा हो जाती है जो सामाजिक कीटों का प्रमुख लक्षण है। यह कोई अचरज की बात नहीं है कि अन्य कई शोधकर्ता भी इसी दिशा में सोच रहे थे।

मेरी एक आदत रही है कि मैं अपने प्रकाशित पर्चों की मुद्रित प्रतियाँ, लगभग साल में एक बार मित्रों, परिवार और सहकर्मियों को भेजता हूँ। अभिवादन करने का और सम्पर्क बनाए रखने का यह मेरा तरीका है। सौभाग्य

की बात है कि अधिकांश लोग इस अनाहूत डाक पर ऐतराज़ नहीं करते और मेरा शुक्रिया अदा कर देते हैं और कई लोग तो बदले में अपने शोध पत्रों के रीप्रिंट्स भेज देते हैं। इस सिलसिले में एक बार 1988 में मुझे राइस विश्वविद्यालय, टेक्सास, यू.एस.ए. के अपनी मित्र व सहकर्मी जोन स्ट्रासमान से रीप्रिंट्स का एक पुलिन्दा प्राप्त हुआ था। उन्होंने अपने शोध पत्रों के अलावा *पीएनएएस* में 'प्रकाशनाधीन' एक पर्चा भी भेजा था। यह पर्चा उनके पति व सहकर्मी डेविड क्वेलर द्वारा लिखा गया था और इसका शीर्षक था 'दी इवॉल्यूशन ऑफ यूसोश्येलिटीः रिप्रोडक्टिव हेडस्टार्ट ऑफ वर्कर्स' [वास्तविक सामाजिकता का विकासः मज़दूरों को प्रजनन में हेडस्टार्ट (लाभ की स्थिति)]। इस पर्चे में क्वेलर ने तर्क दिया है कि मज़दूर को 'प्रजनन में हेडस्टार्ट' मिलता है क्योंकि 'उसकी जन्म-बस्ती में पहले से ही विभिन्न उम्र के शिशु होते हैं' जिसकी वजह से 'उसके प्रयास के फलस्वरूप इनमें से कुछ (शिशु) जल्दी ही आत्मनिर्भर उम्र प्राप्त कर सकते हैं'।

इस विचार को एक सरल गणितीय मॉडल में ढालकर क्वेलर ने गणना की थी कि पोलिस्टेस व मिस्कोसिटेरस वंश की सामाजिक ततैयों में मज़दूरों में परोपकारी अनुर्वरता के विकास की व्याख्या के मामले में उनकी हेडस्टार्ट परिकल्पना कहीं अधिक शक्तिशाली है बनिस्बत अगुणित-द्विगुणित स्थिति की वजह से उत्पन्न जेनेटिक असममिति के। उन्होंने दर्शाया था कि ऐसे मज़दूर चाहे स्वयं से मात्र 0.03-0.09 जेनेटिक सम्बन्ध वाली साथी सन्तानों की देखभाल करें तो भी वे अकेले रहकर प्रजनन करने वाले समकक्ष सदस्यों के बराबर फिटनेस हासिल कर लेंगे। यह स्थिति तब भी होगी जब किसी अकेली संस्थापक ततैया (जो बस्ती को छोड़कर स्वयं की बस्ती स्थापित करे) की सन्तानों को सम्भालने की क्षमता मज़दूरों से 6-17.4 गुना ज़्यादा हो।*आर. मार्जिनेटा* के साथ मेरा अनुभव कहता था कि अगुणित-द्विगुणित परिकल्पना से आगे जाने की ज़रूरत है। तो क्वेलर की हेडस्टार्ट परिकल्पना ने मुझे तत्काल आकर्षित किया। सामाजिकता को बढ़ावा देने में क्वेलर की हेडस्टार्ट जैसी शक्तिशाली ताकत का सुझाव पहले किसी ने नहीं दिया था। और यह साफ था कि वास्तविक सामाजिकता के विकास में जनांकिकी की भूमिका की समग्र खोजबीन के लिहाज़ से हेडस्टार्ट परिकल्पना आदर्श थी।

मगर यह भी साफ था कि क्वेलर ने जिस ढंग से हेडस्टार्ट परिकल्पना को निरूपित किया था, उसमें गम्भीर समस्या थी। समस्या यह थी कि चूँकि जन्म बस्ती में 'पहले से ही विभिन्न उम्र के शिशु उपस्थित हैं' इसलिए क्वेलर ने अण्डे से लेकर वयस्क अवस्था तक किसी भी सन्तान की परवरिश का श्रेय मज़दूर को दे दिया था, जबकि

हो सकता है कि वह मज़दूर उस सन्तान का विकास पूरा होने के महज़ एक दिन या कुछ दिन पहले ही शंखी में से प्रकट हुआ हो (यानी उसने इस सन्तान की परवरिश मात्र एक या कुछ दिन की होगी)। यह मान्यता इस बात को अनदेखा कर देती है कि रानी व अन्य मज़दूरों ने उस सन्तान की परवरिश अण्डे से शुरू करके उस अवस्था तक की थी, जिस अवस्था के बाद सम्बन्धित मज़दूर की भूमिका शुरू हुई। काम के इस हिस्से का श्रेय (फिटनेस में योगदान) रानी व अन्य मज़दूरों को मिलना चाहिए, न कि उस मज़दूर को जो बाद में प्रकट हुई है। किसी भी मज़दूर की फिटनेस में योगदान प्रत्येक सन्तान की परवरिश में उसके योगदान के अनुपात में गिना जाना चाहिए; अन्यथा होगा यह कि एक ही इल्ली की परवरिश से मिलने वाला समूचा फिटनेस लाभ कई मज़दूरों को पूरा-पूरा मिल जाएगा। मुझे यह स्पष्ट था कि क्वेलर की हेडस्टार्ट परिकल्पना में लाभ का जो परिमाण मिल रहा है, वह कुछ हद तक उनके मॉडल में मज़दूरों को दिए गए अनुचित लाभ की वजह से है।

अलबत्ता, मुझे यह भी स्पष्ट था कि किसी एकल बस्ती संस्थापक ततैया की तुलना में मज़दूर को कुछ लाभ तो है, क्योंकि उसकी पहुँच कुछ ऐसी सन्तानों तक है जो अपने विकास का कुछ हिस्सा पूरा कर चुकी हैं, और उसके करने को कुछ कम काम बचा है। मैंने तर्क किया कि यदि कोई मज़दूर सन्तान-समूह के विकास के एक भाग में काम करती है और उस समूह को आत्मनिर्भरता तक लाने से पहले मर जाती है, और यदि अन्य मज़दूर शेष अधूरे काम को पूरा करते हैं, तो मृत मज़दूर को सन्तानों के जीवन व वृद्धि में उसके आंशिक योगदान का श्रेय (फिटनेस) मिलना चाहिए, चाहे यह योगदान (देखभाल) उसने इन सन्तानों के विकास के शुरू में, बीच में या अन्तिम हिस्से में दिया हो। दूसरे शब्दों में, एकल संस्थापक ततैया को अपनी मेहनत का लाभ मिलना सुनिश्चित नहीं है और उसे थोड़ी-सी भी फिटनेस हासिल करने के लिए सन्तान समूह के विकास की पूरी अवधि तक जीवित रहना पड़ेगा। मगर एक बहु-मादा घोंसले में किसी मज़दूर के लिए लाभ की प्राप्ति ज़्यादा सुनिश्चित है क्योंकि यदि वह सन्तानों के विकास की अवधि के एक हिस्से के लिए भी जीवित रहे, तो उसे आंशिक फिटनेस तो मिल ही जाएगी। लिहाज़ा, लाभों के इस विचार को 'सुनिश्चित फिटनेस लाभ' नाम दिया।

जीवित रहने की अवधि के अनुपात में मज़दूरों की फिटनेस की गणना करने पर मैंने पाया कि *आर. मार्जिनेटा* में सुनिश्चित फिटनेस लाभ की बदौलत मज़दूरों की फिटनेस उस स्थिति में भी किसी एकल संस्थापक ततैया के बराबर हो जाती है जब वे ऐसी सन्तानों की देखभाल करें जो उनसे मात्र 0.14

सम्बन्धित हों और एकल संस्थापक ततैया प्रति इकाई समय में उनके मुकाबले 3.6 गुना ज़्यादा काम करे। सुनिश्चित फिटनेस लाभ का यह यथार्थवादी मॉडल क्वेलर की अयथार्थ-वादी हेडस्टार्ट परिकल्पना से कम शक्तिशाली है मगर फिर भी शक्तिशाली तो है। अगुणित-द्विगुणित के मुकाबले यह परिकल्पना परोपकारी मज़दूरों के जैव-विकास की चालक शक्ति के रूप में 2.4 गुना ज़्यादा कारगर है।

अपने बाद के शोध पत्रों में क्वेलर ने मेरे विचारों के आधार पर अपने मॉडल को नए सिरे से निरूपित किया है, मगर मुझे यह देखकर हैरत होती है कि एक शोध पत्र को छोड़कर बाकी सबमें आज भी लोग क्वेलर के उसी शोध पत्र का हवाला देते हैं जिसमें उन्होंने अपनी मूल संकल्पना प्रस्तुत की थी और साथ में मेरी सुनिश्चित फिटनेस परिकल्पना का हवाला देते हैं। वे इन दोनों में अन्तर को समझकर किसी एक के पक्ष में मत व्यक्त करने की ज़हमत नहीं उठाते। उद्धरण (किसी शोध पत्र का हवाला कितने शोध पत्रों में दिया जाता है यानी सायटेशन) के आँकड़ों को लेकर मेरे मन में बहुत कम सम्मान है और इसके बाद तो यह और भी कम हो गया है। बहरहाल, सुनिश्चित फिटनेस लाभ मॉडल ने मुझे काफी सन्तोष प्रदान किया क्योंकि इसने वैकासिक जीव विज्ञान की एक अनसुलझी गुत्थी को सुलझाने में कुछ योगदान तो दिया है।

तब से आज तक मैं वास्तविक सामाजिकता के विकास की व्याख्या में सुनिश्चित फिटनेस लाभ मॉडल के साथ कई अन्य कारकों को जोड़कर एक एकीकृत मॉडल विकसित कर पाया हूँ। इस एकीकृत मॉडल के विकास के दिन मेरे लिए अत्यन्त उत्साह के दिन थे। एक ऐसे एकीकृत मॉडल का विचार सचमुच बहुत आकर्षक है जो ऐसे विभिन्न कारकों को एक साथ देखता है जो मिल-जुलकर परोपकारी मज़दूरों के विकास को बढ़ावा दे सकते हैं। मगर हम क्या चाहते हैं कि यह एकीकृत मॉडल हमारे लिए क्या भूमिका अदा करेगा? यह तो हम पहले से ही जानते हैं कि परोपकारी मज़दूर विकसित हुए हैं और स्वार्थी, एकल घोंसला बनाने की क्रिया भी जारी है। आदर्श रूप में हम शंखी में से प्रकट होती हर मादा के बारे में यह भविष्यवाणी करना चाहेंगे कि क्या वह अपनी माँ का घोंसला छोड़कर एक स्वार्थी, एकल घोंसला बनाने का विकल्प चुनेगी या क्या वह माँ के घोंसले में रुकेगी और अपना शेष जीवन अपनी माँ को और सन्तानें पैदा करने में मदद करते बिताएगी। हालाँकि, हम जानते हैं कि *आर. मार्जिनेटा* के मामले में मादाओं की इन अलग-अलग रणनीतियों में सफल होने की क्षमता अलग-अलग होती है और ऐसा प्रतीत होता है कि उन्हें यह बात 'पता' होती है और वे अपनी क्षमता के अनुसार रणनीति चुनती हैं, मगर मुझे लगता है कि हम अभी ऐसा

मॉडल विकसित करने और हरेक ततैया के बारे में प्रायोगिक रूप से जाँचनेयोग्य भविष्यवाणी करने से कोसों दूर हैं।

तो मैं थोड़ा कम महत्वाकांक्षी बना और एक ऐसा एकीकृत मॉडल विकसित करने का प्रयास किया जिसके तहत यह भविष्यवाणी की जा सके कि शंखियों में से निकलती ततैयों का कितना अनुपात स्वार्थी, एकल घोंसला बनाने की रणनीति चुनेगा और कितना हिस्सा परोपकारी मज़दूर रणनीति अपनाएगा। और इसमें मुझे आश्चर्यजनक सफलता मिली। मैंने एक एकीकृत मॉडल तैयार किया जो भविष्यवाणी करता था कि करीब 5 प्रतिशत आबादी को स्वार्थी एकल घोंसला निर्माण की रणनीति चुननी चाहिए जबकि 95 प्रतिशत ततैयों को परोपकारी मज़दूर बनने की रणनीति चुननी चाहिए (चित्र 5)। इस मामले में वास्तविक आँकड़े मॉडल से काफी मेल खाते हैं।

सवाल 3: ततैया अपनी रानी कैसे चुनती हैं?

किसी भी जन्तु के व्यवहार के बारे में हम दो सवाल पूछ सकते हैं और पूछना चाहिए। प्राकृतिक चयन ने उस व्यवहार को बढ़ावा क्यों दिया, और जन्तु उस व्यवहार को अंजाम कैसे देते हैं? यानी कौन-से कारक उस व्यवहार को सम्भव बनाते हैं? सामाजिक कीटों के विकास के सन्दर्भ में हमें सिर्फ यह नहीं पूछना चाहिए कि प्राकृतिक चयन ने एक अनुर्वर मज़दूर जाति और कार्यक्षम श्रम विभाजन के विकास को कैसे बढ़ावा दिया बल्कि

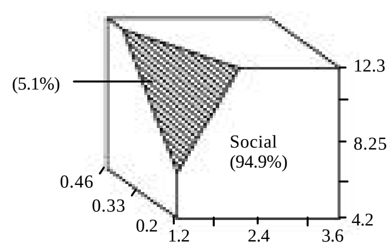

चित्र 5: एकीकृत मॉडलः वास्प की बस्ती में शंखियों में से निकल रही ततैयों का कितना अनुपात स्वार्थी, एकल घोंसला बनाने की रणनीति चुनेगा और कितना हिस्सा परोपकारी मज़दूर रणनीति अपनाएगा, इसके लिए एकीकृत मॉडल विकसित किया गया। यह मॉडल भविष्यवाणी करता है कि करीब 5 प्रतिशत आबादी एकल घोंसला निर्माण की रणनीति (चित्र में शेडेड भाग) और 95 प्रतिशत ततैया परोपकारी मज़दूर वाली रणनीति (चित्र में बिना शेडिंग वाला हिस्सा) का चुनाव करेंगी।

यह भी पूछना चाहिए कि वे कौन-से तात्कालिक कार्यिकीय व अन्य क्रियाविधियाँ हैं जो इन कीटों को इस श्रम-विभाजन को निभाने तथा अन्य अद्‌भुत करिश्मे करने की क्षमता देती हैं। अतीत में इन दो तरह के सवालों की खोजबीन को अलग-अलग करने की प्रवृत्ति थी मगर आज हम समझते हैं कि ये दो सवाल साथ-साथ सामने आते हैं और इनकी खोजबीन साथ-साथ की जानी चाहिए। इसी भावना से मैं अपना समय इन तथाकथित 'क्यों' व 'कैसे' सम्बन्धी सवालों में बाँटता हूँ। तो अब अपने तीसरे व अन्तिम उदाहरण में मैं 'कैसे' वाले प्रश्नों का रुख करता हूँ।

आर. मार्जिनेटा की बस्ती की मुखिया एक अकेली रानी होती है और जब तक वह रानी मौजूद है, तब तक प्रजनन पर उसका एकाधिकार होता है। अलबत्ता, रानी सतत निगरानी में होती है और समय-समय पर उसे हटाकर उसकी जगह कोई मज़दूर ले लेती है। ज़ाहिर है, रानी की वारिस की पहचान और जिस विधि से उसे चुना जाता है, ये दिलचस्प सवाल हैं। ये सवाल हमारे आकर्षण का केन्द्र बने। चूँकि कुदरती तौर पर रानी का प्रतिस्थापन बहुत विरली घटना है और इसका पूर्वानुमान नहीं किया जा सकता, इसलिए हमने रानी के प्रतिस्थापन के अनुरूपण/स्वांग (simulation) प्रयोग किए। आम तौर पर हम छेड़छाड़ से मुक्त किसी ऐसी कुदरती बस्ती का अध्ययन करते हैं जिसमें मूल रानी मौजूद है। फिर प्रायोगिक तौर पर रानी को हटा देते हैं और ऐसी रानी-विहीन या अनाथ बस्ती का अध्ययन करते हैं। हम एक बार फिर इस बस्ती में से रानी को

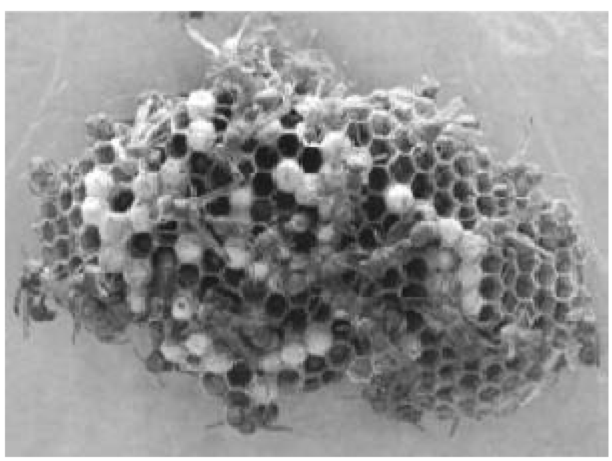

प्रतिस्थापित करके तीसरी बार इसका अध्ययन कर सकते हैं। रानी को हटाने या प्रतिस्थापित करने पर ततैयों का व्यवहार निहायत अनपेक्षित और दिलचस्प होता है।

रानी को हटाने के चन्द मिनटों के अन्दर, *आर. मार्जिनेटा* की कमोबेश शान्तिपूर्ण बस्ती एक निहायत आक्रामक समाज में तबदील हो जाती है। रानीशुदा बस्ती की तुलना में रानी-विहीन बस्ती में आक्रामकता में कई गुना वृद्धि हो जाती है (आक्रामकता से हमारा आशय दादागिरी के व्यवहार से है)। इससे भी ज़्यादा हैरत की बात तो यह है कि रानी के वापिस आते ही दादागिरी का यह व्यवहार सामान्य स्तर पर आ जाता है। और भी आश्चर्यजनक अवलोकन यह है कि दादागिरी के व्यवहार में यह वृद्धि किसी एक मज़दूर द्वारा प्रदर्शित की जाती है, जो (रानी के हटने के) पहले ही दिन अपनी दादागिरी को खुद के सामान्य स्तर से दस गुना तक बढ़ा लेती है और रानी के लौट आने पर अपनी दादागिरी कम कर देती है। जिन प्रयोगों में हमने रानी को नहीं लौटाया, तब जिस मज़दूर ने रानी के हटते ही अपनी आक्रामकता बढ़ाई थी, उसकी आक्रामकता धीरे-धीरे कम होती है, उसके अण्डाशयों का विकास होता है और वह अगली रानी बन जाती है।

लिहाज़ा हम इस अति-आक्रामक मज़दूर को उस समय तक भावी रानी (पीक्यू - potential queen) कहते हैं जब तक कि वह अपना पहला अण्डा न दे दे, उसके बाद तो उसे रानी का खिताब मिल जाएगा! तो पीक्यू का चयन कैसे होता है और कब होता है? मेरी एक स्नातक छात्र सुजाता कारडिले (अब सुजाता देशपाण्डे) ने इसी सवाल का जवाब देने की कोशिश की। इस उद्‌देश्य से डिज़ाइन किए गए उसके कई प्रयोगों के बावजूद, हम अब तक रानी के उपस्थित रहते पीक्यू को पहचानने या उसकी भविष्यवाणी करने में असफल रहे हैं। रानीशुदा बस्तियों के विस्तृत अवलोकनों के बाद सुजाता ने रानी को हटाया, पीक्यू की पहचान की और फिर रानी को हटाने से पहले संकलित आँकड़ों को देखा, यह समझने की उम्मीद में कि इस पीक्यू के बारे में कौन-सी बात अनूठी थी। ऐसा लगता है कि पीक्यू में कोई अनूठी बात नहीं होती। उसके व्यवहार, वर्चस्व की रैंक, शरीर के डील-डौल, उम्र या अण्डाशय के विकास के लिहाज़ से उसमें कुछ भी अनूठा नहीं होता। तो फिलहाल फैसला यह है कि रानी को हटाने से पहले हम पीक्यू की भविष्यवाणी नहीं कर सकते।

यह सही है कि हम पीक्यू की भविष्यवाणी नहीं कर सकते, मगर कुछ तथ्यों ने हमें यह सोचने को मजबूर किया कि अन्य आदिम वास्तविक सामाजिक प्रजातियों के समान *आर. मार्जिनेटा* में भी एक पूर्व मनोनीत वारिस होती होगी, हालाँकि, हो सकता

है कि रानी की उपस्थिति में वह 'गुप्त' रहती हो। तथ्य इस प्रकार थेः

(i) रानी को हटाने के बाद मात्र एकमज़दूर अपनी आक्रामकता बढ़ाती है,

(ii) वह ऐसा अत्यन्त फुर्ती से करती है, और

(iii) शेष मज़दूरों द्वारा उसे एकमत से स्वीकार किया जाता है।

इन तथ्यों की वजह से हमें यह लगा कि अन्य आदिम सामाजिक प्रजातियों के समान *आर. मार्जिनेटा* में भी रानी की एक पूर्व-चयनित वारिस होती होगी, हालाँकि, रानी की उपस्थिति में शायद हमारी दृष्टि से वह 'गुप्त' है। लिहाज़ा, हमने इस 'गुप्त वारिस परिकल्पना' की जाँच के लिए एक प्रयोग डिज़ाइन किया। इस प्रयोग में हमने एक घोंसले को दो भागों में काट दिया और दोनों भागों को तार की जाली के एक पार्टिशन से अलग-अलग कर दिया। फिर बेतरतीबी से (randomly) आधे मज़दूरों को एक भाग में तथा शेष आधे मज़दूरों को दूसरे भाग में रख दिया। रानी को बेतरतीबी से किसी एक भाग में रखा गया। इस प्रयोग में रानी-रहित भाग के मज़दूर जाली के पार उपस्थित रानी का आभास नहीं कर पाते और रानी-रहित बस्ती के मानिन्द व्यवहार करते हैं। इसका मतलब यह होता है कि रानी-रहित हिस्से की कोई मज़दूर अति-आक्रामक पीक्यू की तरह व्यवहार करने लगती है और अन्ततः रानी बन जाती है। मगर जैसे ही रानी-रहित हिस्से में पीक्यू स्पष्ट चिन्हित हुई, हमने रानी और पीक्यू की अदला-बदली कर दी; मज़दूरों को नहीं छेड़ा। रानी-पीक्यू अदला-बदली प्रयोग का तर्क निम्नानुसार था। चूँकि मज़दूरों को दो हिस्सों में बेतरतीबी से बाँटा गया है, इसलिए 'गुप्त वारिस' के रानीशुदा या रानी-रहित हिस्से में पाए जाने की सम्भावना 50-50 प्रतिशत है। यानी जिन प्रयोगों में गुप्त वारिस रानी-रहित हिस्से में होगी, वहाँ वह पीक्यू (इसे हम पीक्यू-1 कहते हैं) बन जाएगी। चूँकि वह सच्ची वारिस होगी, इसलिए उसे दोनों हिस्सों के मज़दूर रानी के रूप में स्वीकार करेंगे, चाहे उसे एक हिस्से से दूसरे हिस्से में स्थानान्तरित किया जाए। और यदि पीक्यू-1 रानीशुदा हिस्से में हुई तो रानी-रहित हिस्से में कोई दूसरी मज़दूर पीक्यू-1 बनेगी क्योंकि वहाँ कोई जायज़ वारिस तो है नहीं। तो, जब इस पीक्यू-1 को दूसरे हिस्से में स्थानान्तरित किया जाएगा तो यह वहाँ के मज़दूरों को अस्वीकार्य होगी। इसकी बजाय सच्ची गुप्त वारिस नई पीक्यू बनेगी (जिसे हम पीक्यू-2 कहते हैं)। अन्ततः पीक्यू-2 दोनों हिस्सों में राज करेगी। दूसरे शब्दों में, होना यह चाहिए कि आधे प्रयोगों में पीक्यू-1 दोनों हिस्सों में स्वीकार्य होगी। और शेष आधे प्रयोगों में दोनों हिस्सों में पीक्यू-1 नहीं बल्कि पीक्यू-2 स्वीकार्य होगी।

यह एक मुश्किल प्रयोग है मगर

मेरी स्नातक छात्र अनिन्दिता भद्र ने इसे आठ बार कर दिखाया। इनमें से तीन प्रयोगों में पीक्यू-1 दोनों हिस्सों में स्वीकार की गई जबकि शेष पाँच प्रयोगों में पीक्यू-2 स्वीकार की गई (चित्र 6)। लिहाज़ा, हमने निष्कर्ष निकाला कि अन्य प्रजातियों के समान *आर. मार्जिनेटा* में भी वास्तव में, एक पूर्व-चयनित रानी वारिस होती है। मगर इसे हम गुप्त वारिस कहते हैं क्योंकि अन्य आदिम सामाजिक प्रजातियों की तरह *आर. मार्जिनेटा* में हम इसे रानी की मौजूदगी में पहचान नहीं पाते। हमारे परिणामों में एक गौरतलब बात यह थी कि पीक्यू-1 या पीक्यू-2 को किसी अन्य सदस्य

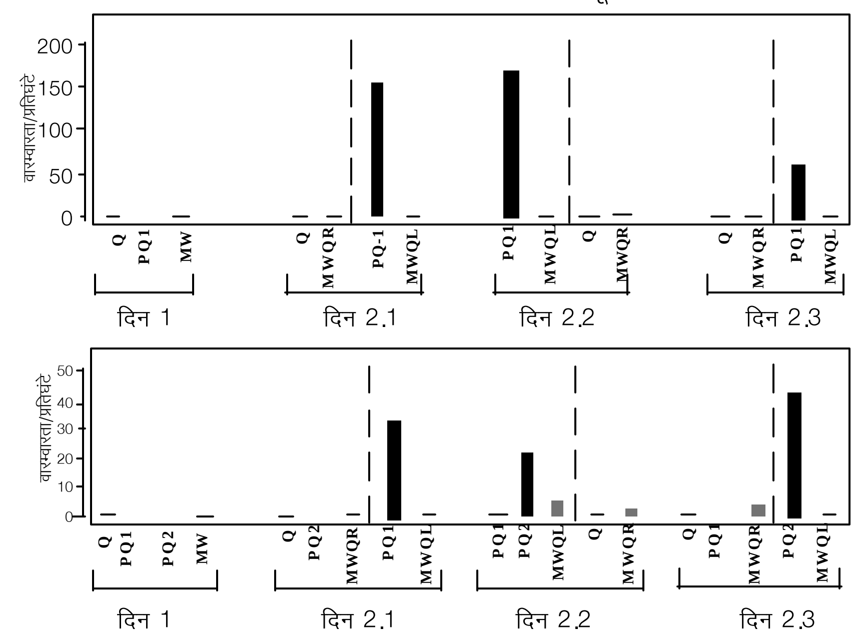

चित्र 6: रानी की असल वारिस: वास्प की बस्ती को रेंडमली दो हिस्सों में बाँटकर किए गए इस प्रयोग की दो परिस्थितियों में विविध श्रेणियों की वास्प के व्यवहार को यहाँ दर्शाया गया है।

ऊपरी हिस्सा: प्रयोग के दौरान दो दिनों के घण्टेवार व्यवहार को ग्राफ में दिखाया जा रहा है। पहले दिन बस्ती में सामान्य हालात हैं। दूसरे दिन को तीन हिस्सों में बाँटा गया है। इस दिन रानी की अनुपस्थिति में रानी की गुप्त वारिस पीक्यू-1 ने काफी आक्रामक व्यवहार दिखाना शुरू किया है, जो बाद में कम हो गया।

नीचे का हिस्सा: इस हिस्से में असल वारिस और आक्रामक व्यवहार से बने वारिस पीक्यू-1 और पीक्यू-2 के घण्टेवार आक्रामक व्यवहार को दिखाया गया है।

से एक भी आक्रामक कार्रवाई का सामना नहीं करना पड़ा, हालाँकि, वे स्वयं काफी उच्च स्तर की आक्रामकता का प्रदर्शन करती हैं। इसलिए, जब हम यह कहते हैं कि दूसरे हिस्से में स्थानान्तरित करने पर पीक्यू-1 स्वीकार्य नहीं है, तो इसका मतलब यह है कि वह स्वतः ही आक्रामकता दर्शाना बन्द कर देती है और वापिस अपना काम करने लगती है। हालाँकि, उसे कोई नहीं ललकारता (पीक्यू-2 भी नहीं)। इस आधार पर हमारा तर्क यह है कि गुप्त वारिस ततैयों को ज्ञात होती है; यह अलग बात है कि रानी की मौजूदगी में हम भावी रानी की शिनाख्त नहीं कर पाते हैं।

सार-संक्षेप यह है कि हम भावी रानी की पहचान नहीं जानते मगर इतना जानते हैं कि ततैया जानती हैं कि कौन-सी ततैया रानी बनेगी। यह बात मुझे मोहक लगती है, बल्कि मैं तो कहूँगा सन्तोषदायक लगती है कि ततैया ऐसा कुछ जानती हैं जो हम नहीं जानते।

यदि आप अपने अध्ययन जन्तु से सचमुच प्रेम करते हों (और विस्मित हों) तो ऐसा ही होता है। मेरा खयाल है कि यह मेरी खुशकिस्मती है कि अपने अध्ययन जन्तु के साथ मेरा इतना लम्बा - पूरे चार दशक का - और प्रगाढ़ सम्बन्ध रहा है। ऐसा बहुत कम लोगों को नसीब होता है, खासकर उन्हें जो अध्ययन के लिए किसी कीट या कृमि को चुनते हैं।

(अगले अंक में जारी)

राघवेन्द्र गडगकरः सेंटर फॉर इकोलॉजिकल साइंसेज़, इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस, बैंगलोर में प्रोफेसर हैं और विज्ञान का इतिहास, इंडियन नेशनल साइंस अकादमी में अनुसंधान परिषद के अध्यक्ष हैं। 1993 में जीव विज्ञान का शान्ति स्वरूप भटनागर सम्मान मिला था।

अँग्रेज़ी से अनुवादः सुशील जोशीः एकलव्य द्वारा संचालित स्रोत फीचर सेवा से जुड़े हैं। विज्ञान शिक्षण व लेखन में गहरी रुचि।

यह आलेख कोलकाता में फरवरी 2010 में आयोजित 'युवा खोजी सम्मेलन' तथा अगस्त 2010 में आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय सामाजिक कीट अध्ययन संघ के सोलहवें सम्मेलन, कोपनहेगन में दिए गए व्याख्यान पर आधारित है।

मूल लेख 'करेंट साइंस' पत्रिका के अंक-6, 25 मार्च 2011, खण्ड 100 में प्रकाशित हुआ था।